**DR KOMAL**

**GUEST ASSISTANT PROFESSOR**

**SNSRKS COLLEGE SAHARSA**

**LECTURE NO 127**

**B A PART 2ND PAPER 3RD**

### प्रस्तावना

प्राचीन काल की भाँति मुगलकाल में भी भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान थी। मुगल साम्राज्य की लगभग 85 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती थी, जिसमें कृषि पर आधारित वर्ग की बहुतायत थी। लघु उद्योग एवं व्यापार आदि की अच्छी वृद्धि के बाद भी तत्कालीन आर्थिक गतिविधियों में कृषि कार्य सर्वोपरि था। ऐतिहासिक स्रोतों एवं विदेशी यात्रियों के विवरण से हमें इसकी जानकारी प्राप्त होती है, परंतु उस काल में कृषि फसलों का उत्पादन किस विधा से होता था? परिस्थितियों के अनुरूप कृषि कार्य को ढालकर उत्पादन में विशिष्टता का सूत्रपात कैसे किया जाता था? अर्थात तत्कालीन कृषि प्रणाली पर विवरण अत्यल्प है, फिर भी यत्र-तत्र इस संदर्भ में जो भी विवरण प्राप्त होते हैं उसके आधार पर एक मोटी धारणा अवश्य बनती है, जिसके आधार पर तत्कालीन कृषिगत तकनीकी विशिष्टता का आंकलन संभव है।  
  
सिंचाई तकनीक- मुगलकाल में कृषि उत्पादन मानसून के साथ जुए सा व्यवसाय था, क्योंकि जल का मुख्य स्रोत वर्षा ही थी। अधिक या कम वर्षा होने पर कृषक कठिनाई में पड़ जाता था। कृषक को अवर्षण की स्थिति में मानसून पर निर्भरता से मुक्त होने के लिये सिंचाई के कृत्रिम साधनों पर आश्रित होना पड़ता था। बाबर के अनुसार, चौदहवीं एवं पन्द्रहवीं शताब्दी में भारत की भूमि बहुत उपजाऊ थी तथा वर्षा भी अच्छी होती थी। कृषकों को सिंचाई के कृत्रिम साधनों की जानकारी भी थी, फलत: उत्पादन भी अच्छा होता था। सिंचाई के कृत्रिम साधनों के अन्तर्गत कुएँ, तालाब तथा नहरें आदि सिंचाई के कृत्रिम साधन के मुख्य श्रोत थे।

### कुएँ

कुएँ सिंचाई के मुख्य स्रोत थे। मुगल काल में अधिकतर कुएँ कच्चे होते थे। दरअसल इट के पक्के कुँओं का निर्माण बहुत खर्चीला था। सन 1660 में अजमेर के मेड़ता परगना में अवस्थित लगभग 6000 कुँओं में मात्र 20 कुएँ पक्के थे। सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक भी पूर्वी राजस्थान के 18 गाँवों के 528 कुँओं में से मात्र 41 कुएँ ही पक्के थे। मुगलकाल में गंगा के ऊपरी मैदानी क्षेत्रों तथा दक्षिणी भाग में कुएँ सिंचाई के मुख्य स्रोत थे, जिससे इन क्षेत्रों में कृषि उत्पादन अच्छी स्थिति में था। कुएँ से पानी निकाल कर उसे नालियों के माध्यम से खेतों तक पहुँचाने की कई विधियाँ थीं।

### रहट

रहट या अरहट जिसे अंग्रेजों द्वारा पर्सियन व्हील नाम से संबोधित किया गया है, सिंचाई हेतु प्रयुक्त की जाने वाली एक विलक्षण मशीन थी, जो चेन तथा गीयर पर आधारित थी। मुगलकाल में लाहौर, दिपालपुर, तथा सरहिंद में इसका व्यापक प्रयोग होता था। भारत में रहट के प्रवेश का वास्तविक समय तेरहवीं या चौदहवीं शताब्दी में माना जाता है किंतु इसका सर्वप्रथम एवं विस्तृत वर्णन बाबर द्वारा सोलहवीं शताब्दी में किया गया है। प्रारंभ में लकड़ी की इस विलक्षण मशीन पर केवल धनी किसानों का ही अधिपत्य बना रहा, परंतु सोलहवीं शताब्दी तक धीरे-धीरे यह आम किसानों की पहुँच के भीतर हो गया। रहट से पानी निकालने की प्रक्रिया यह थी कि कुएँ की गहराई के अनुसार दो समान लंबाई की रस्सियों के एक सिरे की ओर लकड़ी का एक लट्ठा बाँध दिया जाता था, जिसके साथ घड़े बंधे होते थे।  
  
दोनों रस्सियों को उस चर्ख पर चढ़ाते हुए जो कुएँ पर लगा होता था, घड़ों को लट्ठे सहित कुएँ में ढीला छोड़ा जाता था। इस चर्ख से धुरे से एक दूसरी चर्खी जुड़ी रहती थी, जिसे बैल घुमाता था। इस चर्खी के दाँते दूसरी चर्खी के दाँतों से फँसे होने के कारण बैलों के घूमने पर खड़े वाली चर्खी भी घूमती थी और इस प्रक्रिया से पानी कुएँ से बाहर निकाला जाता था। कुएँ से बाहर आने पर घड़े का पानी कुएँ के पास ही स्थिति एक कठौते में गिराया जाता था, जो नालियों के माध्यम से अपेक्षित खेतों तक पहुँचता था। सिंचाई कार्य में प्रयुक्त होने वाले इस महत्त्वपूर्ण यंत्र ने सिंचाई की संभावना को पर्याप्त बढ़ा दिया। सिंचाई की इस प्रक्रिया में बैलों के प्रयोग से मानव ऊर्जा की बचत होती थी। जिसका प्रयोग कृषि से संबंधित अन्य उद्यमों में किया गया।

### चरस

कुएँ से पानी निकालने की दूसरी सामान्य विधि चरस थी। बाबर के अनुसार आगरा, चंदवार, बयाना आदि क्षेत्रों में चरस द्वारा सिंचाई होती थी। इस विधि में कुएँ की घिरनी पर रस्सी चढ़ाकर उसके एक सिरे में चमड़े का बड़ा बैग बाँधा जाता था। जबकि दूसरा सिरा एक बैल से बंधा होता था। बैल को कुएँ के समीप खड़ा कर पानी का बैग कुएँ में ढीला छोड़ा जाता था। बैग में पर्याप्त पानी भर जाने के बाद एक व्यक्ति बैल को हांकता हुआ कुएँ से दूर ले जाता था और इस प्रकार खींचकर कुएँ से बाहर आये पानी से भरे बैग को कुएँ पर खड़ा एक दूसरा व्यक्ति एक कठौते में खाली करता जाता था। कठौते से जुड़ी नालियों द्वारा पानी खेतों तक पहुँच जाता था।  
  
बाबर ने इस विधि को अत्यंत घृणित बताया है क्योंकि जब बैल पानी का बैग एक बार खींचकर प्रक्रिया दुहराने के लिये पुन: कुएँ की ओर लौटता था तो रस्सी, मार्ग के पड़े गोबर एवं मूत्र आदि को लथेड़ती जाती थी जिससे यह गंदगी रस्सी द्वारा कुएँ में चली जाती थी, और कुएँ का जल दूषित हो जाता था। सिंचाई की चरस तकनीक से ढेंकली के मुकाबले अधिक गहरे कुएँ से पानी खींचा जा सकता था। अत: यह तकनीक उन क्षेत्रों के लिये अधिक उपयोगी थी जहाँ कुएँ का जलस्तर अपेक्षाकृत अधिक नीचे होता था। इस उपकरण के माध्यम से ढेंकली की अपेक्षा अधिक मात्रा में पानी निकाला जा सकता था अत: इसके प्रयोग द्वारा अधिक बड़े खेतों की सिंचाई संभव थी।

### ढेंकली

जिन क्षेत्रों में कुँओं का जलस्तर अपेक्षाकृत ऊँचाई पर होता था वहाँ लीवर सिद्धांत पर आधारित ढेंकली नामक उपकरण सिंचाई हेतु प्रयुक्त होता था। वाराणसी के भारत कला भवन में संग्रहित मृगावत की चित्रित हस्तलिपि, जिसका चित्रण उत्तर प्रदेश में 1525-70 के बीच हुआ, इस उपकरण को दर्शाती है। उस उपकरण के नीचे उथले कुएँ के किनारे पर एक खूंटी गड़ी होती थी और दूसरे किनारे पर एक कांटेनुमा हिस्सा लगा रहता था। इस कांटे के बीच में एक लंबा खंभा उत्तोलक के सिद्धांत के अनुसार लगा रहता था। इस खंभे में कुएँ के किनारे पर एक बाल्टी लटकी होती थी और दूसरे किनारे पर भारी पत्थर रहता था। एक आदमी रस्सी खींचकर इस यंत्र को चला सकता था। रस्सी को कुएँ के अंदर खींचा जाता था और पानी से भरी बाल्टी खंभे से उठाकर खोल दी जाती थी, जिससे पानी खेतों में पहुँच जाए।  
  
इस यंत्र द्वारा कुएँ से पानी बाहर निकालने के लिये कड़े श्रम की आवश्यकता थी, फिर भी कम खर्चीला होने के कारण यह साधारण किसानों की पहुँच में था। कुँओं से पानी निकालकर सिंचाई करने की उपर्युक्त विधियों के अलावा एक सामान्य विधि पानी को ढोकर खेतों तक पहुँचाने की थी। बाबर के अनुसार कुछ स्थानों पर आवश्यकतानुसार स्त्री-पुरूष कुँओं से डोल या मटकों में पानी भर-भरकर खेतों में पहुँचाते थे। मुगलकालीन किलों में सीढ़ीदार पक्के कुँओं, जिन्हें बावली कहा जाता था, का निर्माण भी महत्त्वपूर्ण था। इन बावलियों के पानी का प्रयोग किले से संबद्ध बाग-बगीचों की सिंचाई हेतु किया जाता था।